अमेरिकी सैनिकों की वापसी और अफगानिस्तान

sanskritiias.com/hindi/news-articles/us-withdrawal-and-afghanistan

(प्रारंभिक परीक्षा : राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की सामयिक घटनाएँ)
(मुख्य परीक्षा : सामान्य अध्ययन प्रश्नपत्र- 2: भारत एवं इसके पड़ोसी- संबंध, द्विपक्षीय, क्षेत्रीय और वैश्विक समूह तथा भारत से संबंधित और/अथवा भारत के हितों को प्रभावित करने वाले करार)

संदर्भ

- जुलाई के प्रथम सप्ताह में, अफगानिस्तान स्थित 'बगराम एयर बेस' से अमेरिकी सैनिकों की वापसी प्रारंभ हो गई, जिन्होंने अफगानिस्तान में 20 वर्ष के लंबे युद्ध में हिस्सा लिया था।
- हाल ही में, राष्ट्रपति जो बाइडेन ने घोषणा की थी कि वह 11 सितंबर तक अफगानिस्तान से अमेरिकी सैनिकों को वापस बुला लेंगे। यह तिथि, 'वर्ल्ड ट्रेड सेंटर और पेंटागन' के जुड़वाँ टावरों पर आतंकवादी हमले की 20वीं वर्षगाँठ है।

अफगानिस्तान की वर्तमान स्थिति

- जब से अमेरिकी सैनिकों ने वापस जाना शुरू किया है, तब से तालिबान ने तेज़ी से महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों पर कब्ज़े की नीति अपनाई है।
- तालिबान ने मई से पहले अफगानिस्तान के 407 ज़िलों में से 73 को अपने नियंत्रण में कर लिया था, उसके पश्चात् जून अंत तक, दो महीनों में कब्ज़े वाले ज़िलों की संख्या 157 हो गई।
- वे अन्य 151 ज़िलों में सरकार से मोर्चा ले रहे हैं, जबकि केवल 79 ज़िले निर्वाचित सरकार के नियंत्रण में हैं।
- तालिबान का सैन्य आक्रमण मुख्यतः उत्तरी ज़िलों पर केंद्रित है, जो उनके दक्षिणी गढ़ों से बहुत दूर हैं। साथ ही, कई प्रांतीय राजधानियाँ भी खतरे में हैं।

अमेरिका का अफगानिस्तान पर आक्रमण

- 11 सितंबर, 2001 के आतंकवादी हमलों के कुछ सप्ताह पश्चात्, तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू. बुश ने अफगानिस्तान पर हमले की घोषणा की, जिस पर तालिबान का शासन था।
- बुश ने कहा था कि तालिबान शासन ने ओसामा बिन लादेन सहित अन्य अल-कायदा आतंकवादियों को सौंपने की उनकी माँग को ठुकरा दिया था, जिन्होंने अमेरिका में हमलों की साज़िश रची थी।
- अफगानिस्तान के अंदर, अमेरिका के नेतृत्व में नाटो सैनिकों ने तालिबान शासन को शीघ्र ही शासन से हटा दिया तथा एक 'संक्रमणकालीन सरकार' की स्थापना की थी।
- मई 2003 में, अमेरिकी रक्षा मंत्री डोनाल्ड रम्सफेल्ड ने घोषणा की कि अफगानिस्तान में प्रमुख सैन्य अभियान समाप्त हो गए हैं।

- इसके पश्चात् अमेरिका ने इराक पर आक्रमण कर दिया, जबकि अफगानिस्तान में पश्चिमी शक्तियों ने एक केंद्रीकृत लोकतांत्रिक व्यवस्था और संस्थानों के निर्माण में मदद की। हालाँकि, इसने न तो युद्ध को समाप्त किया और न ही देश को स्थिर किया।

अमेरिकी सैनिकों के वापसी के कारण

- राष्ट्रपति ओबामा से सबसे पहले अफगानिस्तान से अमेरिकी सैनिकों को वापस लाने का वादा किया था। लेकिन वे इसके लिये 'फेस-सेविंग एग्ज़िट' भी चाहते थे।
- जुलाई 2015 में, ओबामा प्रशासन ने 'तालिबान और अफगान सरकार' के बीच पहली बैठक के लिये एक प्रतिनिधि भेजा था, जिसकी मेज़बानी पाकिस्तान ने की थी।
- बाद में, राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने तालिबान के साथ सीधे बातचीत करने के लिये अफगानिस्तान में एक विशेष दूत, ज़ल्मे खलीलज़ाद को नियुक्त किया था।
- खलीलज़ाद और उनकी टीम ने दोहा में तालिबान प्रतिनिधियों के साथ बातचीत की, जिसके कारण फरवरी 2020 में अमेरिका और तालिबान विद्रोहियों के मध्य समझौता हुआ।
- उक्त समझौते में, ट्रंप प्रशासन ने वादा किया कि वह 1 मई, 2021 तक अफगानिस्तान से सभी अमेरिकी सैनिकों को वापस बुला लेगा। राष्ट्रपति जो बाइडेन ने भी 'ट्रंप-तालिबान समझौते' का समर्थन किया है, लेकिन वापसी की समय-सीमा को 11 सितंबर तक बढ़ा दिया।

ट्रंप-तालिबान समझौते की शर्तें

- दोहा वार्ता शुरू होने से पहले, तालिबान ने कहा था कि वे केवल यू.एस.ए. के साथ सीधी बातचीत करेंगे, न कि काबुल सरकार के साथ, क्योंकि उसे वे मान्यता नहीं देते हैं।
- अमेरिका ने इस माँग को प्रभावी तौर से स्वीकार कर इस प्रक्रिया से 'अफगान सरकार' को हटा दिया और विद्रोहियों के साथ सीधी बातचीत की।
- फरवरी का समझौता, संघर्ष के चार पहलुओं पर आधारित है – हिंसा, विदेशी सेना, अंतरा-अफगान शांति वार्ता तथा अल-कायदा व इस्लामिक स्टेट जैसे आतंकवादी समूहों द्वारा अफगान धरती का प्रयोग।
- गौरतलब है कि आई.एस. की एक अफगान इकाई, 'इस्लामिक स्टेट खुरासान प्रांत' (ISKP) है, जो बड़े पैमाने पर पूर्वी अफगानिस्तान के 'नंगरहार' से संचालित होती है।
- समझौते के अनुसार, तालिबान ने हिंसा को कम करने, अंतरा-अफगान शांति वार्ता में शामिल होने तथा विदेशी आतंकवादी समूहों के साथ सभी संबंधों को समाप्त करने का वादा किया था।
- इसके विपरीत, अमेरिका ने फरवरी में समझौते पर हस्ताक्षर के समय अपने सभी सैनिकों (लगभग 12,000) को 1 मई, 2021 तक वापस लेने का वादा किया था।

समझौते के बाद की प्रतिक्रिया

- समझौते पर हस्ताक्षर होने के पश्चात् अमेरिका ने हज़ारों तालिबान कैदियों को रिहा करने के लिये अफगान सरकार पर दबाव डाला, जो अंतरा-अफगान वार्ता की एक प्रमुख शर्त थी।
- तालिबान प्रतिनिधियों और अफगान सरकार के मध्य सितंबर 2020 में दोहा में बातचीत शुरू हुई, लेकिन इसमें कोई सफलता नहीं मिल सकी और शांति प्रक्रिया विफल रही।
- तालिबान ने विदेशी सैनिकों के खिलाफ हमले कम कर दिये लेकिन समझौते पर हस्ताक्षर होने के बाद भी अफगान बलों पर हमला जारी रखा।
- इसके अतिरिक्त, तालिबान लड़ाकों ने विगत कई महीनों में पत्रकारों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और अन्य नागरिक समाज के लोगों की लक्षित हत्याएँ की हैं।

तालिबान-पाकिस्तान गठजोड़

- पाकिस्तान, उन तीन देशों में से एक था, जिसने 1990 के दशक में तालिबान शासन को मान्यता दी थी। तालिबान ने पाकिस्तान की इंटर-सर्विसेज इंटेलिजेंस (ISI) की मदद से अफगानिस्तान के अधिकांश हिस्से पर कब्ज़ा कर लिया था।
- 9/11 के हमलों के पश्चात् पाकिस्तान के सैन्य तानाशाह परवेज मुशर्रफ ने बुश प्रशासन के दबाव में तालिबान के साथ औपचारिक संबंध कथित तौर पर तोड़ लिये तथा वे अमेरिका के 'आतंक के विरुद्ध युद्ध' में शामिल हो गए।
- लेकिन पाकिस्तान ने दोहरा खेल खेला। इसने तालिबान के 'रहबारी शूरा' को आश्रय प्रदान किया, जो उनके शीर्ष नेताओं से बना एक समूह था।
- पाकिस्तान ने तालिबान को फिर से संगठित किया, धन और लड़ाके जुटाए, सैन्य रणनीति की योजना बनाई तथा अफगानिस्तान में वापसी की।
- भ्रष्टाचार के आरोपों, अक्षमता और लगातार हमलों का सामना करने वाली काबुल सरकार ने तालिबान की राह को आसान बना दिया।

पाकिस्तान का हित

- अब, जब अमेरिका वापस जा रहा है और तालिबान आगे बढ़ रहा है, तो पाकिस्तान फिर से सुर्खियों में है।
- हालाँकि, हिंसक रास्ते से तालिबान द्वारा अफगानिस्तान पर कब्ज़ा, पाकिस्तान के 'मूल हितों' की पूर्ति नहीं कर सकता है।
- पाकिस्तान, अफगानिस्तान में भारत के प्रभाव को रोकना चाहता है तथा तालिबान को काबुल में स्थापित करना चाहता है।
- लेकिन 1990 के दशक की तरह अफगानिस्तान पर हिंसक कब्ज़े से अंतर्राष्ट्रीय स्वीकार्यता की कमी होगी, जिससे अफगानिस्तान का भविष्य भी अस्थिर हो जाएगा।
- ऐसे परिदृश्य में, पाकिस्तान को अफगानिस्तान से शरणार्थियों की एक और लहर तथा 'तहरीक-ए-तालिबान' जैसे पाकिस्तान-विरोधी आतंकवादी समूहों की मज़बूती का सामना करना पड़ सकता है।

भारत द्वारा तालिबान से संवाद के कारण

- विगत दिनों में कतर के एक अधिकारी के माध्यम से खबर सामने आई थी कि भारत ने दोहा में तालिबान के साथ संपर्क किया है। नई दिल्ली ने भी तालिबान तक अपनी पहुँच की खबरों का खंडन नहीं किया है।
- भारत का यह रुख देर से, लेकिन 'यथार्थवादी स्वीकृति' का संकेत देता है कि तालिबान आने वाले वर्षों में अफगानिस्तान में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।
- तालिबान से निपटने के लिये भारत के पास तीन महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं-

1. अफगानिस्तान में अपने अरबों रुपए के निवेश को सुरक्षित करना।
2. भविष्य के तालिबान शासन को रावलपिंडी (पाकिस्तान का सैन्य मुख्यालय) का मोहरा बनने से रोकना।
3. यह सुनिश्चित करना कि पाकिस्तान समर्थित 'भारत-विरोधी आतंकवादी समूहों' को तालिबान का समर्थन न मिले।

जब तालिबान सत्ता में था तो भारत ने इसके साथ वार्ता या किसी प्रकार का संबंध ना रखने का विकल्प चुना था।

निर्वाचित अफगानिस्तान सरकार की स्थिति

- अमेरिकी खुफिया संस्थान ने संभावना व्यक्त की है कि निर्वाचित सरकार छह महीने के भीतर गिर सकती है।
- जनरल ऑस्टिन मिलर से लेकर राष्ट्रपति बाइडेन तक, कोई भी अमेरिकी नेता अफगान सरकार की स्थिरता के बारे में निश्चित नहीं है।

- इसलिये, विशेषज्ञों के अनुसार, तीन परिदृश्य हो सकते हैं-

1. एक राजनीतिक समझौता हो सकता है, जिसमें तालिबान और निर्वाचित सरकार कुछ 'शक्ति-साझाकरण तंत्र' के लिये सहमत हों तथा संयुक्त रूप से अफगानिस्तान के भविष्य को आकार दें।
2. एक चौतरफा गृहयुद्ध हो सकता है, जिसमें सरकार, आर्थिक रूप से समर्थित और पश्चिम द्वारा सैन्य रूप से प्रशिक्षित, प्रमुख शहरों में अपने पदों पर बनी रह सकती है, जबकि तालिबान ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी पहुँच बढ़ाता रहेगा। साथ ही, अन्य नृजातीय लड़ाके अपनी जागीर के लिये लड़ते रहेंगे।
3. अंतिम परिदृश्य ये हो सकता है की तालिबान पूरे अफगानिस्तान पर कब्ज़ा कर ले।

   अफगानिस्तान से निपटने की योजना बनाने वाले किसी भी देश को उक्त तीनों परिदृश्यों के लिये तैयार रहना होगा।